Research Inspiration
(Peer-reviewed, Open Access and indexed)
Journal home page: www.researchinspiration.com
ISSN: 2455-443X, Vol. 10, Issue-IV, Sep. 2025

संगीत में रोजगार की संभावनाएं: एक समीक्षात्मक अध्ययन
(Employment Opportunities in Music: An Analytical Study)

Dr. Roli Kanoujia[a,*]

[a]*Associate Professor, Aacharya Narendra Dev Nagar Nigam Mahila Mahavidyalaya, Chhatrapati Sahu Ji Maharaj University, Kanpur, Uttar Pradesh (India).*

KEYWORDS

रोजगार, शिक्षक, चित्रपट संगीत, कलाकार।

ABSTRACT

हिन्दुस्तानी संगीत प्राचीन काल से ही हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग रहा है। इसकी जड़े प्राचीन वेदों से जुड़ी हैं। समय के साथ विविध बदलावों को स्वयं में समाहित करते हुये आज यह हमें वर्तमान स्वरूप में प्राप्त हुआ है। हिन्दुस्तानी संगीत आरम्भ से ही गुरु मुख प्रधान रहा है। गुरु के सम्मुख बैठ कर शिष्यगण उनसे संगीत की बारीकियाँ सीखते थे। हमारा संगीत श्रुत्याधारित है इसीलिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि आमने–सामने बैठ कर शिक्षा ली जाये। किन्तु पहले के समय में तकनीकी विकास न होने के कारण यह बाध्यता थी परन्तु अब अनेक माध्यमों से हम सुदूर बैठे भी संगीत प्रशिक्षण प्राप्त कर सकते हैं। आज न केवल संगीत सीखना सरल हुआ है बल्कि शिक्षित समाज में संगीत के प्रति सम्मान की भावना बढ़ी है। आज संगीत सीख कर केवल शिक्षक या कलाकार ही नहीं बन सकते बल्कि संगीत में रोजगार की अनेक संभावनाएं परिलक्षित होती हैं। यद्यपि आज का दौर बदलने से शास्त्रीय संगीत की अपेक्षा लोगों की रुचि चित्रपट संगीत की ओर अधिक उन्मुख हुई है तथापि यदि ध्यानपूर्वक देखा जाये तो चित्रपट संगीत एवं संगीत के अन्य रोजगारों को अपनाने में शास्त्रीय संगीत, स्वर, लय ताल की उचित जानकारी होना परम आवश्यक समझ में आता है। आज लोग पत्रकारिता, दूरस्थ शिक्षा, संगीत निर्माण, पार्श्व गायन, रिकॉर्डिंग, संगीत समीक्षा, वाद्य निर्माण, अध्यापन कार्य, कलाकार के रूप में न केवल अर्थोपार्जन कर रहे हैं बल्कि मान–सम्मान भी प्राप्त कर रहे हैं।

1. प्रस्तावना

प्राचीन काल से लेकर 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक संगीत की शिक्षा गुरुओं के द्वारा गुरुमुख से दी जाती रही है। प्राचीन काल में गुरुकुल के माध्यम से तथा मध्यकाल में जब संगीत को राज्याश्रय प्राप्त हुआ तो गायन, वादन तथा नृत्य तीनों कलाओं का विकास हुआ। ''किसी भी देश की संस्कृति और सभ्यता का अनुमान उस देश की संगीत कला की अवस्था से लगाया जाता है। भारत की संस्कृति और सभ्यता विश्व में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। प्रत्येक देश के संगीत पर उस देश की अपनी राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक गतिविधियों का प्रभाव पड़ता है। इन्ही विशेष प्रभावों से होता हुआ संगीत अपनी विशिष्टता बना लेता है। भारतीय संगीत ने इन्हीं परिस्थितियों से होकर विकास की लम्बी यात्रा पार की तथा वर्तमान रूप को प्राप्त किया।''[1] (शर्मा, डॉ. स्वतन्त्र, 1995) परन्तु संगीत शिक्षा प्रणाली में प्राचीन काल तथा मध्यकाल में कोई परिवर्तन नहीं आया। प्राचीन काल में गुरु अपने द्वारा चुने

*** Corresponding author**
E-mail: rolimusic16@gmail.com (Dr. Roli Kanoujia).
https://orcid.org/0009-0000-1820-0818
DOI: https://doi.org/10.53724/inspiration/v10n4.05
Received 12th July 2025; Accepted 20th August 2025
Available online 30th Sep. 2025
2455-443X /©2025 The Journal. Published by Research Inspiration (Publisher: Welfare Universe). This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

हुये शिष्यों को घर में ही संगीत शिक्षा देते थे। कम से कम 12 वर्ष तक शिक्षा दी जाती थी। उस समय संगीत के रोजगार के अन्य क्षेत्र न होकर केवल एक ही क्षेत्र होता था और वह था संगीत कला प्रदर्शन, अतः हम कह सकते है कि शिक्षक शिष्यों को कलाकार बनाते थे।

उस समय संगीत कुछ गिने चुने लोगों के हाथ में था, बाद में समय परिवर्तित हुआ। अंग्रेजों के आने के बाद संस्थागत शिक्षा का प्रारम्भ हुआ पं. विष्णु नारायण भातखण्डे तथा पं. विष्णु दिगम्बर पलुष्कर जी के प्रयासों से संगीत को शिक्षण संस्थाओं में विषय के रूप में मान्यता मिली।

''स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद ही भारत में आकाशवाणी, दूरदर्शन, सिनेमा, संगीत सम्मेलनों ने एक साथ मिलकर संगीत को पुनर्जीवित किया। श्रोता और कलाकार, मंच एवं महफिल, शास्त्र एवं विद्यालय सभी ने एक साथ मिलकर संगीत के पुनरूत्थान की प्रतिज्ञा ली। नवीन अनुसंधान ने भारतीय संगीत की खोई मान्यता को प्राप्त कर पुनः नये सिरे से भारतीय संगीत को आम जनता में पहुंचाने में मदद की। रजवाड़ों, नगरों, संगीत प्रेमियों और साधकों के सहयोग से घरानेदार तथा परम्परागत गायकी एवं स्वतंत्र वादन का विकास हुआ साथ ही विश्व के विभिन्न देशों के बीच सांस्कृतिक आदान–प्रदान चलते रहे।''[2] (शर्मा, डॉ. स्वतन्त्र, 1995)

अब संगीत में स्नातक, परास्नातक, शोध कार्य हो रहे हैं कुछ ऐसे संस्थान हैं जो संगीत की मात्र प्रायोगिक शिक्षा ही देते हैं। जैसे– आईटी.सी. रिसर्च अकादमी कोलकाता तथा गंगू बाई हंगल गुरुकुल हुबली कर्नाटक आदि।

2. संगीत संस्थायें

मोटे तौर पर संगीत संस्थाओं को दो भाग में बाँट सकते हैं –

(1) सरकारी संस्था– सरकारी संस्था के संचालन में सरकार तथा प्रशासन की अहम भूमिका होती है, एवं सरकार द्वारा दी गई वित्तीय सहायता से इन संस्थाओं का क्रियान्वयन तथा भरण पोषण होता है। इन संस्थाओं में सरकारी विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय आते हैं और ऐसे भी कुछ सरकारी संस्थान हैं जैसे– शांति निकेतन कोलकाता, इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़, राजा मानसिंह तोमर म्यूजिक एण्ड आर्ट यूनीवर्सिटी ग्वालियर आदि। एक अन्य उदाहरण 'नेशनल सेन्टर फार दि परफार्मिंग आर्टस, मुम्बई' है जिसके विषय में यह कहा जा सकता है कि ''बम्बई में ही गुरु–शिष्य प्रणाली द्वारा संगीत की शिक्षा देने वाली एक अन्य संस्था 'नेशनल सेन्टर फार द परकार्मिंग आर्ट्स' के नाम से एक जनवरी 1966 में स्थापित हुई। चेयर मैन श्री जे. आर. डी. टाटा तथा एक्जीक्यूटिव डाइरेक्टर के रूप में श्री नारायण मेनन कार्यरत थे। इस संस्था ने शास्त्रीय एवं परम्परागत कलाओं के संरक्षण एवं पुनरूज्जीवन के उच्च आदर्शों को लक्ष्य रखते हुये एक ओर अत्यन्त आधुनिक तकनीक से सुसज्जित रिकार्डिग व्यवस्था तथा वातानुकूलित सभागार (एयर कन्डीशन्ड ऑडीटोरियम) का निर्माण किया तथा उसमें ख्याति प्राप्त संगीतकों के कार्यक्रम आयोजित कर एवं रिकार्ड कर उन्हें संग्रहालय में स्थान दिया, तो दूसरी ओर संगीत शिक्षण हेतु साउन्ड प्रूफ (ध्वनि रोधक) कक्षों में शिक्षण प्रारम्भ किया। इस राष्ट्रीय केन्द्र के लिये महाराष्ट्र सरकार ने 25,000 वर्ग गज का क्षेत्र दिया है।''[3] (चन्द, डॉ. हुकम, 1998)

इसी प्रकार इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय (खैरागढ़) के विषय में कहा जा सकता है कि ''संगीत नृत्यकला, चित्रकला, ग्राफिक आर्ट, मूर्तिकला इत्यादि सम्बन्धित कलाओं के प्रशिक्षण का यह देश में एकमात्र विश्वविद्यालय है। यहाँ प्रथमा, मध्यमा, बी.ए., बी.म्यूज, कोविद (आनर्स), एम.ए., एम.म्यूज, गीतांजली एक वर्षीय सुगम संगीत का डिप्लोमा, छत्तीसगढ़ लोकसंगीत

डिप्लोमा के अतिरिक्त शोध हेतु पी.एच.डी. डी. म्यूज एवं छात्रों के अध्ययन के लिए विशेष पाठ्यक्रम की शिक्षण व्यवस्था उपलब्ध है।''[4] (कपूर, तृप्त, 1989)

अधिकतर महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में संगीत से स्नातक, परास्नातक, शोध कार्य कराया जाता है। संगीत से सम्बन्धित अन्य कोर्सेज भी कालेजों की सुविधानुसार कराये जाते हैं। जिससे छात्र/छात्रायें आगे संगीत से अपना भविष्य बना सकें।

(2) गैर सरकारी– गैर सरकारी संस्थान व्यक्तिगत रूप से निजी संस्थानों के द्वारा चलाये जाते हैं। यदि संगीत के क्षेत्र में गैर सरकारी संस्थाओं को देखा जाये तो आज विभिन्न नगरों में अनेक छोटे–बड़े संगीत संस्थान संगीत प्रशिक्षण का कार्य कर रहे है। संगीत के बड़े गैर सरकारी संस्थान जैसे– भातखण्डे संस्कृति विश्वविद्यालय, गांधर्व संगीत महाविद्यालय मंडल मुंबई, प्रयाग संगीत समिति इलाहाबाद, प्राचीन कला केन्द्र चण्डीगढ़ इत्यादि हैं। ये संस्थान डिप्लोमा तथा डिग्री कराते हैं।

भातखण्डे संस्कृति विश्वविद्यालय के विषय में कहा जा सकता है कि ''मैरिस कॉलेज ऑफ हिन्दुस्तानी म्यूजिक ने उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत के विस्तार में न केवल भारत में केन्द्र की भूमिका निभायी है अपितु अन्य देशों जैसे– मॉरीशस, श्रीलंका, नेपाल तथा जापान में भी भारतीय संगीत का विस्तार किया है। छात्र इस संस्था की स्थापना के समय से ही यहाँ आते रहे हैं।''[5] (चन्द, डॉ. हुकम, 1998)

इन संस्थानों से संगीत शिक्षण प्राप्त कर छात्र/छात्रायें संगीत के क्षेत्र में विविध रोजगार अपनाते हैं यदि वे इण्टर कॉलेज में संगीत के शिक्षक बनना चाहते हैं तो हाईस्कूल के लिये टी.जी.टी. तथा इण्टर के लिये पी.जी. टी. की परीक्षा पास करनी होती है, इसके अतिरिक्त बी. एड. की डिग्री की भी आवश्यकता होती है। जबकि डिग्री कॉलेज अथवा विश्वविद्यालय में प्राध्यापक बनने हेतु नेट, स्लेट परीक्षा पास कर साक्षात्कार की प्रक्रिया से गुजरना होता है। इसके अतिरिक्त जे.आर.एफ. की अर्हता प्राप्त कर छात्र/छात्रायें संगीत में शोध कार्य हेतु नामांकित होते हैं तथा सरकार उन्हें शोधकार्य हेतु छात्रवृत्ति प्रदान करती है।

इसके अतिरिक्त उचित ढंग से परम्परागत संगीत शिक्षा ग्रहण कर संगीत कलाकार भी बन सकते हैं।

3. मंच प्रदर्शन–

भारतीय संगीत जो कि गुरु–शिष्य परम्परा पर आधारित है उसका उददे्श्य प्रारम्भ से ही मंच प्रर्दशन रहा है। आजकल संगीत का स्वरूप परिवर्तित हो चुका है शास्त्रीय संगीत के मंच प्रर्दशन के अतिरिक्त कुछ गायक वादक विविध कार्यक्रमों में अन्य गायन शैलियों में भी प्रर्दशन कर जीविकोपार्जन करते है। आजकल अनेक सरकारी तथा गैर सरकारी प्रायोजक संस्थाएं हैं जैसे स्पिक मैके, संगीत नाटक अकादमी, साहित्य कला परिषद्, इण्डिया टुडे म्यूजिकल ग्रुप इत्यादि।

यद्यपि आज संगीत के क्रियात्मक पक्ष में भी अनेक प्रकार की अनियमितितायें देखने को मिलती हैं। शास्त्रीय संगीत के सम्बन्ध में यह विडम्बना है कि यह अत्यधिक श्रमसाध्य होने पर भी अर्थ तथा प्रसिद्धि प्राप्त करवाने में सक्षम नहीं हो पाता। उदाहरणस्वरूप– कोई अत्यन्त निपुण गायक भी यदि कम आयु का हो तो उसको सफल और सम्पूर्ण गायक के रूप में मान्यता नहीं मिलती।

एक सफल तथा निपुण शास्त्रीय गायक के लिये काफी अनुभव और आयु की अपेक्षा की जाती है। शास्त्रीय संगीत के अच्छे गायक भी अर्थ अर्जन में उतने सफल नहीं हो पाते जितने सुगम संगीत, फिल्मी संगीत और लोक संगीत से सम्बन्धित गायक और कलाकार होते हैं। इसका कारण यह है कि शास्त्रीय संगीत की चोटी के कलाकार की ख्याति एक विशिष्ट वर्ग अथवा समाज तक

हो पाती है। आम जनता उन्हें नही जानती है। आज संगीत के विद्वानों को चाहिये कि शास्त्रीय संगीत में ऐसी विशेषतायें उत्पन्न करें कि वह विशिष्ट समाज अथवा वर्ग की वस्तु न होकर सम्पूर्ण समाज में अपनी पहचान बना सके।

4. संगीत के संचार माध्यमों में व्यवसाय– संचार माध्यमों का अर्थ उन सभी साधनों, तरीकों अथवा उपकरणों से होता है जिनका उपयोग सूचना, संदेश या विचारों को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति या एक बड़े समूह तक पहुँचाने के लिये किया जाता है। जिसमें रेडियो, टीवी, प्रिंट मीडिया, कम्प्यूटर, इंटरनेट इत्यादि आते हैं।

पूर्व में विभिन्न कैसेट, रिकोर्ड्स कम्पनियां थीं। बाद में दूरदर्शन, रेडियो चैनल्स सब संगीत के कार्यक्रमों पर आधारित हैं। इनसे सम्बन्धित लोग संगीत के माध्यम से अर्थोपार्जन कर रहे हैं।

(1) आकाशवाणी– यदि आकाशवाणी की ही बात करें तो हमे यह ज्ञात होता है कि आज आकाशवाणी संगीत को जन–जन तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात आकाशवाणी से शास्त्रीय व सुगम संगीत के प्रसारण की कई योजनायें बनी व उनका क्रियान्वयन हुआ। 1930 में भारत सरकार ने रेडियों को **'ऑल इण्डिया रेडियो'** की संज्ञा दी। आजादी के समय भारत में मात्र 6 रेडियो स्टेशन थे अब इनकी संख्या बढ़कर सैकडों का आंकड़ा पार कर चुकी है। भारत में लगभग 250 बोलियों में आकाशवाणी प्रसारण होता है। ''1950–51 में तत्कालीन सूचना व प्रसारण मंत्री श्री बी. आर. देवधर ने आकाशवाणी के दिल्ली, बम्बई, मद्रास, कलकत्ता व नागपुर केन्द्र के सदस्यों तथा संगीत कलाकारों की एक सभा बुलाई, जिसमें शास्त्रीय संगीत के उत्कृष्ट प्रस्तुतीकरण के लिये ठोस निर्णय लिये गये, संगीत के लिये अलग स्टाफ की व्यवस्था की गई, कुछ मंचीय कलाकारों की आकाशवाणी केन्द्र पर नियुक्ति की तथा कुछ कलाकारों को नियत समय के लिये ही नियुक्त किया गया।''[6] (शर्मा, डॉ. राधिका, 2006)

आकाशवाणी में आज नित नये कलाकारों का कार्यक्रम प्रसारित किया जाता है। आकाशवाणी हेतु समय–समय पर संगीत स्टाफ तथा उद्घोषकों को नियुक्त किया जाता है। आज आकाशवाणी से लोक संगीत, शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत, पाश्चात्य संगीत, चित्रपट संगीत, सांगीतिक सम्मेलन और संगीत के कार्यक्रमों का सीधा प्रसारण, कलाकारों के साक्षात्कार सम्बन्धी कार्यक्रम, वाद्यवृन्द कार्यक्रम समय–समय पर प्रसारित होते रहते हैं। यद्यपि इसकी पहुंच सुदूर क्षेत्रों तक है किन्तु आकाशवाणी के कलाकारों को जो पारिश्रमिक दिया जाता है वह बहुत कम होता है। कोई कलाकार उससे आधारभूत आवश्यकताएं भी पूरी नहीं कर सकता। एक अन्य तथ्य भी है कि आकाशवाणी केन्द्र पर जो अधिकारी होते हैं उनका संगीत से कोई सम्बन्ध नहीं होता। जबकि आकाशवाणी के अधिकतर कार्यक्रम संगीत से संबधित होते हैं। इसलिये आवश्यकता है कि संगीत के विद्वान तथा जानकार अधिकारी इस तरह के स्थान पर नियुक्त हों।

(2) दूरदर्शन– आकाशवाणी के माध्यम से यदि श्रोतागण कार्यक्रम का श्रवण कर सकते हैं तथापि **दूरदर्शन** एक ऐसा माध्यम है जिसके अन्तर्गत श्रोतागण कलाकारों का प्रत्यक्ष दर्शन भी कर सकते हैं। उनकी कार्यक्रम प्रस्तुति का रंग, कलाकार की मुद्राएं उनके बैठने का ढ़ंग इत्यादि दर्शकों को प्रभावित करता है।

दूरदर्शन के माध्यम से शास्त्रीय संगीत के अनेक कार्यक्रम प्रसारित किये जाते रहे हैं। जैसे संगीत का अखिल भारतीय कार्यक्रम, गेट मास्टर्स ऑफ इण्डिया, ध्वनि तथा साधना कार्यक्रम आदि। दूरदर्शन पर 'संगीत पाठ' कार्यक्रम का भी प्रसारण होता है। संगीत पाठ कार्यक्रम में ''उत्तर तथा दक्षिणी पद्धति के कलाकारों द्वारा प्रदर्शन,

ताल–वाद्य कचहरी, कई संगीत सम्मेलनों की रिकार्डिंग भी प्रस्तुत की जाती है। न केवल विद्यार्थी अपितु साधारण जनता भी इस कार्यक्रम में विशेष रुचि लेती है।''[7] (शर्मा, डॉ. राधिका, 2006)

5. रिकार्डिंग स्टूडियो– परम्परागत रूप से रिकार्डिंग स्टूडियो व प्रदर्शनकारी कक्ष वह होता है जो ध्वनि रोधक होता है। जहाँ वाद्य यंत्र, स्वर क्षेत्र तथा गायक, वादक के संगीत की रिकार्डिंग होती है जिसमें एडिटिंग, फिक्सिंग इत्यादि सभी तकनीकी होती है आज के समय में रिकार्डिंग स्टूडियो का संगीत में बहुत बड़ा योगदान है। जो भी संगीत हो चाहे वह फिल्म संगीत हो, एलबम हो, विज्ञापन के जिंगल हो, बैकगाउण्ड संगीत हो सब रिकार्डिंग स्टूडियो की ही देन है। रिकार्डिग स्टूडियो से रोजगार के साधन बढ़े हैं। आज प्रत्येक नगर में अनेक रिकार्डिंग स्टूडियोज हैं।

6. दूरस्थ शिक्षा– आज दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से भी संगीत के क्षेत्र में रोजगार के अवसर सामने आये है। आज संगीत के जानकार विविध सोशल मीडिया के माध्यम से भी रागों की बंदिशें, हारमोनियम, थ्योरी (शास्त्र पक्ष) इत्यादि सिखा रहे हैं। आम जनता संगीत से न केवल परिचित हो रही है वरन् उससे सीख भी रही है। यद्यपि यह भी सत्य है कि :–

''गुरु न हो तो कई बार दूरस्थ शिक्षा अर्थ का अनर्थ भी कर सकती है। दूरस्थ शिक्षा का औचित्य वहीं पर है, जहाँ जिज्ञासा तो है परन्तु साधन नही है।''[8] (संगीत'–पत्रिका, मार्च 2005)

आज कलाकारों की संगीत प्रस्तुति तथा मंच प्रर्दशन को लोग यूटयूब तथा अन्य सोशल प्लेटफार्म पर डालते हैं। कलाकार तथा युवा छात्र/छात्रायें जो कि संगीत से जुड़े है वे भी अपनी संगीत रचना इन माध्यमों पर डालते हैं। आज ''संगीत– स्वरलिपि पुस्तकों के माध्यम से, ध्वनि मुद्रिकाओं के माध्यम से अध्ययन के लिये संगीत सुदूरवर्ती स्थानों सुदूर स्थित अभ्यासको को उपलब्ध होने लगा है।''[9] (व्यास, डा. विद्याधर, 2001)

7. वाद्य निर्माण– वाद्यों के निर्माण के अभाव में सांगीतिक कार्यक्रमों की कल्पना नहीं की जा सकती है आज असंख्य वाद्य निर्माता सांगीतिक वाद्यों के निर्माण द्वारा अर्थोपार्जन कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त वाद्यों के मरम्मत की दुकानें होती हैं। जहाँ संगीत के वाद्यों को दुरुस्त करने अथवा उसे बनाने के कारीगर मौजूद होते हैं।

इसके अतिरिक्त आज इलैक्ट्रानिक वाद्य जैसे इलैक्ट्रानिक तानपुरा तबला, लहरा इत्यादि का प्रचलन हो गया है अब इलैक्ट्रानिक सिथेंसाइजर, इलैक्ट्रानिक ड्रम इत्यादि विदेशी वाद्य भी प्रचार में है। इन सबके प्रचार से इनके निर्माताओं, वितरकों को अच्छी आय के साधन उपलब्ध हुये हैं।

8. पार्श्व संगीत– पार्श्व से अभिप्राय है, जो समक्ष न हो। पार्श्व संगीतकार तथा गायक रंगभूमि या मंच पर न होकर पर्दे के पीछे से संगीत प्रस्तुत करते हैं जैसे चित्रपट संगीत के पार्श्व गायक तथा गायिका होते हैं। ''चित्रपट–संगीत लौकिक भावों को अधिक पल्लवित करता है, केवल इस आधार पर उसे हेय मानना तनिक भी उचित नहीं जान पड़ता। अनेक बार एक शास्त्रीय संगीत के कलाकार द्वारा वह रंजकता प्राप्त नहीं होती, जो एक तीन मिनट के गीत (जो कि उसी राग का आधार लेकर चलता है) में प्राप्त हो जाती है।''[10] (शर्मा, कु. अरुणा 1997) चित्रपट संगीत का अपना एक इतिहास रहा है। पहले के कलाकार स्वयं पार्श्व गायन करते थे। किन्तु अब इसमें क्रांन्तिकारी परिवर्तन आ चुका है। पुराने अनेक पार्श्व गायकों ने खूब नाम कमाया जैसे– लता मंगेश्कर, आशा भोंसले, मोहम्मद रफी, शमशाद बेगम, किशोर कुमार, तलत अज़ीज़, सुरेश वाडेकर, एस.पी. बाला सुब्रहमण्यम। आज भी अनेक पार्श्व गायक तथा गायिकायें इस क्षेत्र में खूब नाम तथा धन अर्जित कर रही

है।.

इसी प्रकार संगीत निर्देशकों ने भी संगीत के क्षेत्र में ख्याति तथा धन अर्जित किया। आज यद्यपि इस क्षेत्र में अस्थिरता तथा राजनीति अत्यधिक है फिर भी लोग इस रोजगार से प्रभावित हो आये दिन अपनी किम्मत आजमाने आते हैं।

इसी प्रकार विभिन्न अवसरों के अनुरूप लय और छन्द के अनुरूप गीत लिखने का कार्य गीतकार या लिरिक्स भी करते हैं। एक साधारण गायक भी कभी–कभी अपने गीत, गजल, भजन रचते तथा कभी–कभी धुने भी स्वयं बनाते हैं।

9. शास्त्रकार व ग्रंथ प्रकाशक– संगीत शास्त्रकारों का संगीत कला के क्षेत्र में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। किन्तु संगीत द्वारा अर्थोपार्जन की पंक्ति में इनकी गणना अंतिम कड़ियों में ही होती है यद्यपि बडे–बड़े ग्रन्थकारों के ग्रंथ संगीत के क्षेत्र में अतुलनीय है, तथा इनके कारण ही आज हमारा संगीत है। तथापि आधुनिक युग में संगीत शास्त्रकार तथा लेखक अपने ग्रंथ एवं पुस्तकों के प्रकाशन से कुछ धन अर्जित कर रहे हैं। इसी श्रृंखला में पुस्तक के प्रकाशक भी अच्छी आय अर्जित करते हैं। जितनी प्रतियाँ बिकती है उसी के अनुरूप वे धन अर्जित करते हैं।

10. संगीत पत्रकार, समीक्षक तथा सम्पादक– इसी प्रकार जब कोई कलाकार संगीत का प्रदर्शन करता है तो वह श्रोताओं की प्रतिक्रिया जानना चाहता है। जनसाधारण में कई आलोचक, समीक्षक तथा पत्रकार होते हैं जो उनके संगीत की समीक्षा समाचार पत्रों, साप्ताहिक मासिक या वार्षिक पत्रिकाओं में करते हैं। समाचार पत्रों के सम्पादक तथा पत्र पत्रिकाओं के सम्पादक एवम् पत्रकार इस माध्यम से अर्थोपार्जन करते हैं।

11. निष्कर्ष– अन्त में निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते है कि आज तकनीकी विकास के परिणामस्वरूप तथा इस नवीन युग में संगीत में रोजगार की अपार संभावनाएं दृष्टिगत होती हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि जिस क्षेत्र में भविष्य बनाना है, उसका प्रशिक्षण समय रहते उचित ढंग से लिया जाये। आज वह समय नहीं जब संगीत को हेय दृष्टि से देखा जाता हो। आज शिक्षित समाज संगीत के महत्व को स्वीकार कर रहा है तथा उसे सम्मान भी देता है। आज संगीत में केवल शिक्षक बनना और कलाकार बनना ही दायरा नहीं हैं बल्कि अपने इस शोधपत्र के माध्यम से मैने इस क्षेत्र में रोजगार की अनेक सम्भावनाओं पर प्रकाश डालने का प्रयास किया। उचित समय में उचित संगीत प्रशिक्षण द्वारा तथा कौशल निर्मित कर संगीत के क्षेत्र में अर्थोपार्जन के साथ आसमान की ऊँचाइयों को छुआ जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची–

1. शर्मा, डॉ. स्वतन्त्र, (1995), भारतीय संगीत एक ऐतिहासिक विश्लेषण, प्रकाशक टी.एन. भार्गव एण्ड सन्स– इलाहाबाद, पृ.–02।
2. शर्मा, डॉ. स्वतन्त्र, (1995), भारतीय संगीत एक ऐतिहासिक विश्लेषण, प्रकाशक टी.एन. भार्गव एण्ड सन्स– इलाहाबाद, पृ.–165।
3. चन्द, डॉ. हुकम, (1998), आधुनिक काल में शास्त्रीय संगीत प्रकाशक– ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली, पृ. 93–94.
4. कपूर, तृप्त, (1989), उत्तरी भारत में संगीत शिक्षा, हरमन पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, पृ.–128।
5. चन्द, डॉ. हुकम, (1998), आधुनिक काल में शास्त्रीय संगीत प्रकाशक–ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली, पृ0–96।
6. शर्मा, डॉ. राधिका, (2006), भारतीय संगीत को संस्थानों और मीडिया का योगदान, संजय प्रकाशन, दिल्ली, पृ0–253।
7. शर्मा, डॉ. राधिका, (2006), भारतीय संगीत को संस्थानों और मीडिया का योगदान, संजय प्रकाशन, दिल्ली, पृ0–302।
8. 'संगीत'– पत्रिका, मार्च 2005, दूरस्थ–संगीत शिक्षा पर आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी, आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी, समाचार, पृ. 57।
9. व्यास, डा. विद्याधर, लेख–शास्त्रीय संगीत में दूरस्थ शिक्षा की संभावनाएं, 'संगीत' – पत्रिका, जनवरी–फरवरी 2001, 'सहस्राब्दी संगीत अंक', पृ.–126।
10. शर्मा, कु. अरुणा, लेख–चित्रपट संगीत : एक दृष्टिकोण, 'संगीत' – पत्रिका, अगस्त 1979, पृष्ठ 6–7।

****